भारत में निर्वाचन व्यवस्था तथा चुनाव सम्बन्धी समस्याएं

मनोज कुमार वर्मा *

सभी तरह की लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में चुनावों का विशेष महत्व होता है, एक तरह से निर्वाचन लोकतांत्रिक व्यवस्था का केन्द्र बिन्दु है। निर्वाचन से ही यह निर्धारित होता है कि शासन कौन चलाएगा और कौन सरकार पर अपना नियंत्रण रखेगा। भारत में वयस्क मताधिकार की मांग स्वतंत्रता आन्दोलन का एक हिस्सा थी। देश की आजादी के बाद लोक सभा तथा राज्यों की विधानसभाओं के चुनाव के लिए सार्वजनीन वयस्क मताधिकार को अपनाया गया। साथ ही भारत में शासन की व्यवस्था के रूप में सांविधानिक लोकतंत्र के साथ संसदीय प्रणाली को अपनाया गया है। इस व्यवस्था का हृदय नियमित, स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव है जो सरकार की संरचना को निर्धारित करते हैं। भारत जैसे घोर पिछड़ेपन, घोर दरिद्रता और घोर निरक्षरता वाले नवस्वतंत्र देश में सबको वोट देने का अधिकार देना संविधान निर्माताओं के लोकतंत्र में बहुत बड़ी आस्था और जनसाधारण में विश्वास का परिचायक था।

भारत में नागरिकों को मताधिकार संविधान के द्वारा प्रदान किया गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 326 में यह प्रावधान किया गया है कि लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं के सदस्यों का चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा। वयस्क मताधिकार की व्यवस्था देते हुए कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति जो भारत का नागरिक है जिसकी आयु कम से कम 18 वर्ष हो (1989 से पहले यह आयु सीमा 21 वर्ष थी) तथा किसी भी दृष्टि से आयोग्य नहीं है, को चुनाव में मतदाता के रूप में भाग लेने का पूरा अधिकार है। उल्लेखनीय है कि पश्चिमी देशों की तुलना में भारत में आजादी के साथ ही सभी स्त्री व पुरूष को बिना किसी भेदभाव मताधिकार प्राप्त हो गया था जबकि चुनावों के इतिहास में प्रारंभ से ही इस पर पुरूषों और धनी वर्गों का प्रभुत्व रहा है। प्रारम्भ में ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका में सिर्फ धनी, सम्पत्तिशाली शासक वर्ग के पुरूषों को ही यह अधिकार प्राप्त था। सन् 1920 तक लगभग सभी यूरोपीय देशों ने महिलाओं को मताधिकार से वंचित रखा और उन्हें इस अधिकार को प्राप्त करने के लिए लम्बा संघर्ष करना पड़ा ।

भारत में संविधान निर्माता स्वतंत्र चुनाव प्रशासन की आवश्यकता से भली–भाँति परिचित थे, इसलिए इसकी व्यवस्था उन्होने निर्वाचन आयोग के रूप में की जिसमें केवल कार्यपालिका का ही नहीं वरन् विधायिका का भी हस्तेक्षप नहीं होगा। जहाँ विश्व के अधिकांश शासन विधानों में निर्वाचन को अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण विषय समझकर उसे व्यवस्थापिका की इच्छा पर छोड़ दिया गया है वहाँ भारतीय संविधान निर्माताओं ने निवार्चन संबंधी सम्पूर्ण व्यवस्था के संचालन का प्रावधान संविधान के अंतर्गत ही कर दिया।

निवार्चन आयोग– संविधान के अनुच्छेद 324 के अनुसार संसद, राज्य विधानमण्डल, राष्ट्रपति व उपराष्ट्रपति के पदों के निर्वाचन के लिए संचालन, निर्देशन व नियंत्रण की जिम्मेदारी चुनाव आयोग की है। 25 जनवरी 1950 को संवैधानिक प्रावधान के तहत भारतीय निर्वाचन आयोग स्थापित किया गया। 1950 से 15 अक्टूबर 1989 तक निर्वाचन आयोग एक सदस्यीय निकाय के रूप में कार्य करता था। 16 अक्टूबर 1989 को राष्ट्रपति ने आयोग के काम के भार को कम करने के लिए दो अन्य निर्वाचन आयुक्तों को नियुक्त किया। 1 जनवरी, 1990 को दोनों चुनाव आयुक्तों का पद समाप्त कर दिया गया। पुनः 1 अक्टूबर 1993 को राष्ट्रपति ने अन्य दो निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति कर दी। उसके बाद से अब तक आयोग बहुसदस्यीय संस्था के तौर पर काम कर रहा है। इस प्रकार वर्तमान में चुनाव आयोग में एक मुख्य चुनाव आयुक्त तथा दो अन्य चुनाव आयुक्त होते हैं।

* **असिस्टेन्ट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, सन्त गणिनाथ राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुहम्मदाबाद गोहना, मऊ**

चुनाव आयेग को चुनावी कार्य करने और चुनावों में निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण के लिए बाहरी नियंत्रण से मुक्त रखा गया है। आयोग की स्वतंत्रता को संविधान के अनुच्छेद 324 (5) के प्रावधानों में अभिव्यक्त किया गया है। मुख्य निर्वाचन आयुक्त को उसके पद से उसी रीति से और उन्हीं आधारों पर ही हटाया जाएगा, जिस रीति से और जिन आधारों पर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को हटाया जाता है। मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सेवा शर्तों में उसकी नियुक्ति के पश्चात उसके लिए अलाभकारी रूप में परिवर्तन नहीं किया जाएगा। निर्वाचन आयोग कार्यपालिका से स्वतंत्र होता है। व्यवस्थापिका की शक्तियों को भी संविधान के प्रावधानों द्वारा सीमित किया गया है।

राज्यों में निर्वाचन आयोग की सहायता के लिए संविधान क्षेत्रीय आयुक्तों का प्रावधान करता है। राष्ट्रपति चुनाव आयोग के परामर्श पर उसकी सहायता के लिए आवश्यक क्षेत्रीय आयुक्तों को भी नियुक्ति कर सकता है। इसके अलावा मतदाता सूची तैयार करने उसके पुनः निरीक्षण तथा चुनाव को संपादित कराने में आयोग के सहायतार्थ एक मुख्य निर्वाचन अधिकारी होता है।

भारत में चुनाव सम्बन्धी समस्याएँ और चुनौतियाँ

भारत में अब तक 16 लोकसभा चुनावों के अलावा सौ से अधिक विधानसभा चुनावों का सफलतापूर्वक संचालन निर्वाचन आयोग द्वारा किया जा चुका है। इसके बावजूद भारतीय लोकतंत्र में अनेक चुनाव सम्बन्धी कमियाँ या समस्याएँ बनी हुई हैं जो इसके सम्मुख एक बड़ी चुनौती है।

(1) भारतीय निर्वाचन में फर्स्ट पास्ट द पोस्ट की व्यवस्था को अपनाया गया है। इसमें ऐसे उम्मीदवार भी चुनाव जीत जाते हैं जिन्हें पड़े मतों का आधा हिस्सा भी प्राप्त नहीं होता है और यदि उम्मीदवारों की संख्या अधिक है तो विजयी प्रत्याशी को प्राप्त मतों की संख्या बहुत कम रह जाती है। इस प्रकार एक ऐसा उम्मीदवार अपने क्षेत्र की जनता का प्रतिनिधित्व करता है जिसे बहुसंख्यक जनता का समर्थन प्राप्त नहीं होता है।

(2) विभिन्न दलों के उम्मीदवारों के चयन में जनता की कोई भागीदारी नहीं होती। जनता को राजनीतिक दलों द्वारा थोपे गए उम्मीदवारों में से किसी एक को अपना प्रतिनिधि चुनने के लिए मजबूर होना पड़ता है चाहे उम्मीदवार ने पैसे के बल पर अपने दल का टिकट प्राप्त किया हो। चुनावों के समय में अक्सर कई राजनीतिक दलों पर उम्मीदवारों से पैसा लेकर टिकट देने का आरोप लगता रहता है।

(3) सिद्धान्त आधारित अथवा कार्यक्रमों पर आधारित स्वस्थ राजनीतिक दल प्रणाली का अभाव निर्वाचन व्यवस्था के लिए बड़ी चुनौती है। भारत में ज्यादतर दल क्षेत्रीय, जातीय और धार्मिक आधार पर गठित होते हैं। वर्तमान में कुल 1400 से अधिक राजनीतिक दल है और इन दलों में आंतरिक लोकतंत्र का सर्वथा अभाव है दलों की संख्या अधिक होने के कारण चुनाव में प्रत्याशियों की संख्या भी अधिक रहती है जिसकी वजह से चुनाव सम्पन्न कराने में तमाम प्रशासनिक कठिनाइयाँ उत्पन्न होती है, साथ ही मतदाता भी भ्रमित रहता है। सिद्धान्त विहीन व्यक्ति आधारित दल चुनाव के बाद अवसरवादी गठबन्धन और अस्थिर सरकार की समस्या खड़ी करते हैं।

(4) निवार्चनों में होने वाला भारी खर्च एक बड़ी समस्या है। चुनावों में खर्च होने वाले धन की वैधानिकता तय करना भी एक बड़ी चुनौती है। चुनावों में अपार खर्च की वजह से ही चुनाव पर कालेधन के खर्च को बढ़ावा मिलता है नतीजतन राजनीति में भ्रष्टाचार का बोलबाला हो जाता है। चुनाव आयोग द्वारा निर्धारित चुनाव खर्च सीमा से कई गुना अधिक धन उम्मीदवारों द्वारा खर्च किया जाता है जिसे रोकने में निर्वाचन आयोग असफल रहा है।

(5) कम मतदान प्रतिशत भी एक बड़ी चुनौती है जो चुनावों के प्रति मतदाताओं की उदासीनता का संकेत है। जो मतदाता मतदान करने जाता है उसमें भी अधिकतर मतदाता विचारों तथा परिणामों की चिन्ता के बिना ही मतदान करते हैं। अर्थात मतदान करने व राजनीतिक परिणामों का उनकी दृष्टि में कोई सम्बन्ध नहीं रहता है। भारत में मतदान व्यवहार के अनेक अध्ययनों से प्रतीत होता है कि चुनावों में ज्यादातर मतदान उन लोगों के द्वारा किया जाता है जो गरीबी रेखा से नीचे होते हैं या कुछ ही ऊपर होते हैं। क्योंकि इसी में जनसंख्या का अधिकांश भाग आता है। इन मतदाताओं से बनी मतदान केन्द्रों की तरफ चलने वाली वृहद् भीड़, बिना किसी उचित संचार के, सिर्फ जाति या धर्म से जुड़े होने के भाव से ही चलती है। ऐसी स्थिति भारतीय निर्वाचन व्यवस्था के लिए चिन्ताजनक कही जाएगी।

(6) भारत में गरीबी और अशिक्षा निष्पक्ष मतदान में बड़ी बाधा है। गरीब व्यक्ति को उम्मीदवार लालच देकर मत प्राप्त करने की कोशिश करते हैं और गरीब व्यक्ति अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अपना मत बेचने को बाध्य हो जाते है। अशिक्षित व्यक्तियों को राजनीतिक दल साम्प्रदायिकता और जातीय भावनाएं भड़का कर आसानी से अपने पक्ष में कर लेते हैं।

(7) चुनावों के समय राजनीतिक दल पैसे देकर मीडिया द्वारा अपने पक्ष में समाचार प्रसारित कराते हैं और मतदाताओं को प्रभावित करने की कोशिश करते हैं जिससे चुनाव नतीजे प्रभावित होते हैं। इसे रोकना चुनाव आयोग के लिए बड़ी चुनौती है।

(8) चुनावों में बढ़ती हिंसा भारतीय निर्वाचन व्यवस्था के सम्मुख बड़ी समस्या है। वर्तमान चुनावी राजनीति में हिंसा और अपराध अपनी मजबूत पकड़ बनाते जा रहे हैं। पहले चुनावों में उम्मीदवार बूथ कैप्चरिंग, अवैध मतदान, अन्य प्रत्याशियों को डराने–धमकाने और अपने पक्ष में मतदान करने के लिए मजबूर करने में अपराधियों की मदद लेते थे, परन्तु अब अपराधी स्वयं भी सक्रिय राजनीति में आ रहे हैं। राजनीतिक दल उन्हें टिकट देने लगे हैं। कुछ मामलों मे तो उम्मीदवार जेल से ही चुनाव लड़ता है और अपने बाहुबल के आधार पर जीत भी जाता है। राजनीति के अपराधीकरण के कारण शरीफ और पढ़ा–लिखा सामान्य व्यक्ति खुद को राजनीतिक प्रक्रिया से काट लिया है जिसे भारतीय राजनीति के लिए कतई शुभ नहीं माना जा सकता है।

(9) साम्प्रदायिक और जातीय राजनीति भी भारतीय चुनावों की एक नकारात्मक विशेषता बनती जा रही है। चुनावों में उम्मीदवार न सिर्फ जाति व धर्म के नाम पर वोट माँगते हैं, बल्कि इस आधार पर राजनीतिक दलों का गठन भी होता है। वर्तमान राजनीति में लोगों की धार्मिक व जातीय भावनाएं भड़काकर राजनीतिक दलों द्वारा वोट प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

राजनीतिक दलों द्वारा निर्वाचन क्षेत्र के जातीय समीकरण के आधार पर प्रत्याशियों का चयन किया जाता है। हालांकि प्रसिद्ध राजनीतिक विश्लेषक योगेन्द्र यादव भारतीय चुनावों में जाति के प्रयोग का सकारात्मक रूप देखते हुए इसे अनुसूचित व अन्य पिछड़ी जातियों के सशक्तीकरण के साथ जोड़कर देखते हैं। उनका मानना है कि जातीय राजनीति ने चुनावी राजनीति को सच्चे अर्थों में प्रतियोगी बनाया है। पिछले दो दशकों से अनुसूचित व अन्य पिछड़ी जातियां जाति के आधार पर महत्वपूर्ण ढ़ंग से एकजुट हो रही हैं इस विश्लेषण के बावजूद राजनीति पर जाति के दुष्प्रभावों की अनदेखी नहीं की जा सकती ।

(10) क्षेत्रीयतावाद और भाषावाद भी भारतीय चुनावी व्यवस्था के लिए एक गम्भीर चुनौती है। सन् 1967 के बाद से भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद का विकास हुआ है जो देश को विघटन की ओर लेकर जा रहा है। अपने क्षेत्र विशेष को महत्व देने के कारण राष्ट्रीयता की भावनाओं का ह्रास हो रहा है और राजनीतिक दल जनता की इन भावनाओं को भड़काने का माध्यम बनते हैं जिससे दंगे होते हैं। महाराष्ट्र में शिव सेना, महाराष्ट्र नवनिमार्ण सेना आन्ध्र प्रदेश में तेलगूदेशम पार्टी की राजनीति इसका उदाहरण है। क्षेत्रवाद के साथ–साथ अपने क्षेत्र विशेष में बोली जाने वाली भाषा को अधिक महत्व देना भी एक समस्या का रूप धारण करता चला जा रहा है।

भारत में चुनाव सम्बन्धी समस्याओं एवं चुनौतियों से निपटने के लिए समय–समय पर विभिन्न समितियों का गठन किया गया और उनकी सिफारिशों को क्रियान्वित भी किया गया, साथ ही संसद ने भी अनेक अधिनियम पारित किए; फिर भी समस्याएं और चुनौतियां बनी हुई हैं। भारतीय निर्वाचन व्यवस्था के समक्ष उपस्थित समस्याओं और चुनौतियों से निपटने के लिए निवार्चन आयोग और राजनीतिक दल दोनों को ही मिलकर प्रयास करने होंगे। चुनाव व्यवस्था में कुछ प्रमुख सुधार जरूरी हैं, जैसे– चुनावी व्यवस्था का पुनर्गठन, चुनावी खर्च पर रोक और राज्य द्वारा इस खर्च का वहन, राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र की स्थापना, चुनावों में बाहुबल और अपराधी तत्वों पर रोक लगाना, महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी में वृद्धि करना तथा निर्वाचन आयोग की स्वयं की स्वतंत्र मशीनरी की व्यवस्था हो आदि।

निष्कर्ष

अब तक के चुनावों के परिणामों ने यह सिद्ध कर दिया है कि चुनाव भारत में लोगों के हाथों एक प्रभावशाली साधन है। भारत के लोग भले ही बड़ी संख्या में अनपढ़, पिछड़े या भौगोलिक रूप से अलग–थलग हों, उन्होंने चुनावों का अर्थ तथा उसकी उपयोगिता को अब समझ लिया है। अगर भारत में लोकतंत्र जीवित है तथा यह तीसरी दुनिया की कुछ बची–खुची लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में से एक और संसार की सबसे बड़ी लोकतांत्रिक व्यवस्था है तो इसका श्रेय भारत की चुनाव प्रणाली को भी जाता है। भारत में चुनावों ने एक लम्बा सफर तय किया है और उसके द्वारा यहाँ लोकतंत्र ने अपनी जड़े मजबूती से जमा ली हैं, फिर भी निर्वाचन व्यवस्था की खामियों और राजनीतिक दलों के स्वार्थ के चलते इसमें कुछ कमियां उत्पन्न हो गई हैं। अतः यदि उन कमियों को स्वार्थ से ऊपर उठकर समाप्त करने की दिशा में कदम बढ़ा दिया जाये तो भारतीय लोकतंत्र निश्चय ही विश्व में एक उदाहरण के रूप में जाना जाएगा। इसके लिए यह आवश्यक है कि चुनावी राजनीतिक प्रक्रिया से स्वयं कटा हुआ प्रबुद्ध वर्ग खुद को चुनावी प्रक्रिया में सम्मिलित करते हुए चुनावों को सक्षम बनाने का प्रयत्न करते रहे और यह विश्वास पैदा करे कि चुनाव भारतीय लोकतंत्र को चलाने का उचित साधन है।

सन्दर्भ :

1. पिंकी पुनिया व रितेश भारद्वाजः चुनाव और निर्वाचन व्यवस्था, भारत में राजनीतिक प्रक्रियाएं (संपादित), वी0एन0 चौधरी व युवराज कुमार, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 2013, पृष्ठ 36–74।
2. ए0एस0 नांरगः भारतीय शासन एवं राजनीति, गीतांजली पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2005,पृष्ठ 299–313।
3. सुभाष कश्यपः हमारा संविधान, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2006, पृष्ठ 253–257।
4. एम0 लक्ष्मीकान्तः भारत की राज व्यवस्था, मैकग्राहिल इजुकेशन, नई दिल्ली, 2015।
5. The constitiution of India, Govt. of India, Ministry of law, Justice and company affairs, 2000, pp.136-137.
6. साधना आर्य, निवेदिता मेनन, जिनी लोकनिताःनारीवादी राजनीति–संधर्ष एवं मुद्दे, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 2001 पृष्ठ 58–70।
7. Yogendra Yadav: "Electoral politics in the time of change: India's third electroral system 1989-99", Economic & Political weekly, Aug. 21-28, 1999, pp. 2393-2399.

●